

UNIVERSAL  
LIBRARY

**OU\_182241**

UNIVERSAL  
LIBRARY



**OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY**

Call No. H 816 / G 196

Accession No. G H 493

Author गङ्गाप्रसाद 'कौशिक' |

Title गोविन्दगुप्त | 1945

This book should be returned on or before the date last marked below.

---

---

---

सरला कौं  
जो मेरे साथ लपटों में बड़ी  
और  
तूफानों में मुस्करायी

—गङ्गाप्रसाद 'कौशल'

---

---

मुद्रक—

पटना लॉ प्रेस, पटना ।





सरला-पुस्तकमाला का तृतीय पुष्प

# गोविन्दगुप्त

( ऐतिहासिक खण्डकाव्य )

रचयिता

श्रीयुत गङ्गाप्रसाद 'कौशल'

प्रकाशक

सरला-पुस्तक-माला

कदमकुर्भाँ, पटना ।

---

---

सरला को  
जो मेरे साथ लपटों में बड़ी  
और  
तूफानों में मुस्करायी

— गङ्गाप्रसाद 'कौशल'

---

---

मुद्रक—

पटना लॉ प्रेस, पटना ।





## प्राक्कथन

इस पुस्तक के नायक गोविन्दगुप्त हैं। ये महाविजयी सम्राट समुद्रगुप्त के प्रपौत्र तथा चन्द्रगुप्त द्वितीय के पुत्र थे। चन्द्रगुप्त द्वितीय के दो पुत्र थे—कुमारगुप्त तथा गोविन्दगुप्त। इनके दादा समुद्रगुप्त ने राज्य का बड़ा विस्तार किया। दक्षिण में, दक्षिण कोशल, केरल, काँची, पूर्व में नेपाल तथा कामरूप, पश्चिम में नरवर, मालय और खानदेश तक के राजा समुद्रगुप्त का आधिपत्य मानते थे। इनके साम्राज्य का विस्तार हुगली से चम्पल और हिमालय की तराई से नर्मदा तक था। लका आदि दूर देश के राजा भी इनके दरबार में अपने राजदूत भेजा करते थे। समुद्रगुप्त महापराक्रमी, तेजस्वी तथा कुराव राजनीतिज्ञ था। मनुस्मृति का यह श्लोक उसपर पूर्णतया घटता है :—

यस्य प्रसादे पद्मा श्रीर्विजयश्च पराक्रमे ;

मृत्युश्च वसति क्रोधे सर्वतेजोमयो नृपः ।

वह अपने समय का अद्वितीय विद्वान्, प्रसिद्ध संगीतज्ञ तथा श्रेष्ठ कवि था। प्रसिद्ध इतिहासज्ञ डॉ० स्मिथ ने उस की तुलना नेपोलियन से कर बाङ्गाल में उसके साथ अन्याय किया है। कहाँ सर्वगुण सम्पन्न सम्राट समुद्रगुप्त और कहाँ फ्रेच बिजेता नेपोलियन !

समुद्रगुप्त के बाद उनके पुत्र चन्द्रगुप्त द्वितीय गद्दी पर बैठे ।

इन्हें चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य भी कहते हैं। इन्होंने अपने राज्य का और भी अधिक विस्तार किया। सौराष्ट्र (काठियावाड़) इन्होंने ही गुप्त साम्राज्य में सम्मिलित किया। बलख से बंग तक तथा दक्षिण में कावेरी तक इनका एकच्छत्र साम्राज्य था। इनके समय में देश ने आश्चर्यजनक उन्नति की। भारतवर्ष का व्यापार योरुपीय देशों से होता था।

चन्द्रगुप्त द्वितीय के बाद उनके पुत्र कुमारगुप्त गद्दी पर बैठे। कुमारगुप्त के अनुज गोविन्दगुप्त शकमण्डल के प्रधान अधिकारी हुये। गोविन्दगुप्त के एकमात्र पुत्र हर्षगुप्त की माँ उसकी बाल्यावस्था में ही मर चुकी थीं। गोविन्दगुप्त का जीवन बड़ा ही त्यागमय था। वे अपने अग्रज कुमारगुप्त के लिए अपने प्राणों की भी परवा न करते थे और यही कारण था कि उनकी भाभी—सम्राज्ञी उन्हें बहुत मानती थी। सम्राट कुमारगुप्त के हृदय में भी उनके व्यक्तित्व, बन्धु-प्रेम, देश-प्रेम, त्याग, वलिदान तथा तपस्या का बड़ा आदर था। गोविन्दगुप्त का सारा जीवन युद्ध-भूमि में ही व्यतीत हुआ। बात यह थी, कुमारगुप्त के शासन-काल में भारत पर हूणों के आक्रमण शुरू हो गये थे, और इधर गुप्त-साम्राज्य भी अन्तिम साँस ले रहा था। कुमारगुप्त इन्द्रलेखा नाम्नी बेश्या की लड़की नवयौवना अनंत पर आसक्त हो गये थे। उन्होंने अपने राज्य में उससे विवाह करने तथा उसे पट्टमहादेवी बनाने की घोषणा भी कर दी थी। उस समय गोविन्दगुप्त नहीं थे।

वे राज्य-सीमा पर शत्रुओं से लोहा ले रहे थे, फिर भी राज्य में कुछ बुजुर्ग, महामात्य दामोदर शर्मा, रामगुप्त, कृष्णगुप्त, अग्निगुप्त आदि ऐसे थे जो इस विवाह के पूणेतया विरुद्ध थे। ये लोग चन्द्रगुप्त द्वितीय से भी सम्मानित किये जाते रहे थे। सम्राट कुमारगुप्त भी इनको आदर की दृष्टि से देखते थे, पर बाद में प्रेम-पाश में फँसकर उन्होंने इन बुजुर्गों का चर्रा भी खयाल नहीं किया। उधर सम्राट कुमारगुप्त की विवाहिता पत्नी भी आत्महत्या करने को तुली थीं। वे वेश्या-बाला अनंत का आर्य-पट्ट पर महादेवों बन कर बैठना नहीं देख सकती थीं, पर सम्राट के सन्मुख गाविन्दगुप्त की अनुपस्थिति में इन बुजुर्गों का कुछ वश न चला। इन्होंने कुछ दिन पहले ही एक अश्वारोही गोविन्दगुप्त को बुनाने के लिए सीमा पर भेज दिया था। दूसरे दिन विवाह होना था, पर दोपहर तक गोविन्दगुप्त न आये। ये लोग बड़े निराश हुये। सन्ध्या समय आशा की किरण चमका। गाविन्दगुप्त चोर वेश में आपहुँचे। महामात्य दामोदर शर्मा ने उन्हें हृदय से लगा लिया और सब बातें बतलायीं। परिस्थितियों से पूर्ण अवगत होने पर गोविन्दगुप्त अन्तःपुर में गये, पर वहाँ सम्राट को न पाया। फिर वे सीधे वेश्या-बाला अनंत के घर गये। वहाँ एक सुन्दर कमरे में सम्राट को देखा। क्रोध में बिना कुछ कहे सुने, सम्राट का हाथ पकड़, वे उन्हे लेकर चलदिये। सम्राट भा शान्त रहे। इस पर नवयौवना अनंत को गुस्सा आया। उसने क्रोव

---

---

में गोविन्दगुप्त का हाथ भटक दिया और उनसे अकड़ अकड़कर बातें करने लगी। यहीं से काव्यारम्भ होता है। गोविन्दगुप्त के वीरगति पाते ही यह पुस्तक समाप्त हो जाती है।

जिन पुस्तकों से मुझे इसके लिखने में थोड़ी बहुत भी सहायता मिली है, मैं उनके लेखकों का चिर ऋणी हूँ।

यह खण्डकाव्य मैंने उन दिनों लिखा था जब मैं १९४१ में बालविनोद (बखनऊ) का सम्पादक था। १९४१ की यह रचना हिन्दी के कुछ लब्धप्रतिष्ठ प्रकाशकों की रक्त-शोषण-नीति के कारण अबतक पड़ी रही। इसे मैं हिन्दी तथा हिन्दी-लेखकों का दुर्भाग्य ही कहूँगा ! अस्तु।

यह पुस्तक कैसे बनपड़ी है, यह मैं विश्व पाठकों पर ही छोड़ता हूँ। यदि इससे पाठकों का जरा भी मनोरजन हुआ, तो मुझे प्रसन्नता होगी।

—————‘कौशल’

## वक्तव्य

प्राणी की उन्नति अवनति उसका पतन और उत्थान देशकाल और पात्र के आधीन है। जैसा देश होगा, जैसा समय होगा, पात्र में जैसी कार्यकारिणी शक्ति होगी, उसी के अनुसार उसकी सफलता या विफलता अपने उद्देश में सफल या विफल होगी। गोविन्दगुप्त एक दूर पुरुष थे, उनमें साहस था, धैर्य था, मर्यादा सुरक्षित रखने की प्रवृत्ति थी, उनमें स्वदेश-ममता थी, वे अनार्य विदेशियों का आक्रमण स्वदेशियों पर सहन नहीं कर सकते थे, उनको आजन्म रणरङ्ग में हम शत्रुओं का सामना करते ही पाते हैं। राजवंश के होकर भी उन्होंने राज्य की लिप्सा कभी नहीं की, वास्तविक राज्य-अधिकारी के पथ के कटक वे कभी नहीं बने। वरन् उसके स्वत्व की रक्षा में ही उत्सर्गित जीवन थे। राज्य पद पर अपने ज्येष्ठ भ्राता को एक वेश्याके प्रपञ्च में आबद्ध देखकर और उनकी पत्नी का व्याथता पाकर वे एक बार इतने कष्टित हुए कि वेश्या के घर पर जाकर उनको पकड़ लाये और उनकी तंबीह भी की, यद्यपि वेश्या बहुत झल्लाई, परन्तु उनको इसकी तनिक परवा नहीं हुई। वे जबतक जीते रहे उचित अधिकारी को ही राज्य-पद पर प्रतिष्ठित कराते रहे और स्वयं उसकी और देश की रक्षा के लिये सर्वदा खड्गहस्त रहे। अन्तिम समय में एक प्रधान गढ़ से दूषणों को वहिष्कृत करने के लिये उन्होंने घोर युद्ध किया, उनको सफलता भी हुई, परन्तु युद्ध में वे आहत इतने हुए कि उनके जीवन

की रक्षा न हो सकी, और इस युद्ध में मातृभूमि की जय बोलते हुए वृद्धावस्था में उनका स्वर्गवास हो गया ।

ग्रथकार ने ग्रथ का नाम गोविन्दगुप्त रखकर उनके महान वीरत्व और चकितकर शौर्य-वीर्य का पुरस्कार ही उनका दिया है। यह ग्रथ वीर रस का समादरणीय ग्रथ है, ग्रंथ में ओजस्विता तो है ही, आख्यान में रचना-निपुणता भी है। कहीं-कहीं सरस ऋतु का वर्णन भी सरसताके साथ किया गया है। मैं यह कहूँगा कि जिस याग्यता से ग्रथ का निर्माण हुआ है, उनसे उनके कविकर्म का भविष्य अतीव उन्नत और उज्ज्वल ज्ञात होता है। मैं उनका समादरणीय सुकवि समझता हूँ ।

—‘हरिऔध’

# सर्ग-सूची

प्रथम सर्ग	..	..	१—३
द्वितीय सर्ग	..	..	४—१०
तृतीय सर्ग	..	..	११—१५
चतुर्थ सर्ग	..	..	१६—२४
पंचम सर्ग	..	..	२५—२८
षष्ठ सर्ग	..	..	२९—३५
सप्तम सर्ग	..	..	३६—४२
अष्टम सर्ग	..	..	४२—४८
नवम सर्ग	..	..	५०—६१
दशम सर्ग	..	..	६२—६८
एकादश सर्ग	..	..	७०—७७
द्वादश सर्ग	..	..	७८—८१
त्रयोदश सर्ग	..	..	८२—८८







## प्रथम सर्ग

( १ )

हाथ भटक कर नव वाला ने  
कहा—“होश मे अब आओ;  
पर गृह मे मनमानी करते  
कौन अरे ! तुम बतलाओ ?

---

( २ )

मुझे जानते हो कि नहीं तुम  
कुत्तों से नुचवाऊँगी ;  
इस अशिष्टता का तुमको मैं  
दण्ड कड़ा दिलावाऊँगी ।”

( ३ )

गरज पड़े गोविन्दगुप्त तब  
“हट दुष्टा ! आगे से टल ;  
आज देख पाया है मैंने  
अयि पिशाचिनी ! तेरा छल !

( ४ )

तेरा गृह यह बना स्वर्ग है  
भोगविलासी, कामी को ;  
फाँस लिया तूने छल-बल से  
आज देश के स्वामी को ।

( ५ )

अब मैं देखूँगा कल कैसे  
होगी पट्टमहारानी ;  
उठा तुम्हारा सब लोगों का  
दुनिया से दाना-पानी ।”

( ६ )

हाथ उठा गोविन्दगुप्त का  
सैनिक आगे बढ़ आए ;  
चंदी करके सभी लोग फिर  
गए रथो पर बिठलाए ।

( ७ )

अग्रज उनके शान्त स्तब्ध थे  
निज सिर नीचा किए हुए ;  
नहीं बोलने का साहस था  
मन की मन में लिए हुए ।

( ८ )

अग्रज-अनुज बढ़े फिर आगे  
जा बैठे दोनो रथ पर ;  
द्रुत गति से चल दिए अश्व फिर  
भगी वायु-गति शरमाकर ।



तीन

## द्वितीय सर्ग

( १ )

पाटलिपुत्र नगर की शोभा  
निर्मल और निराली है ;  
आज सभी जनतः उमग में  
भूम रही मतवाली है ।

( २ )

शीतल जल, सुमनो से सिञ्चित  
आज राजपथ अति भाते ;  
मगल वाद्य सब जगह बजते  
सैनिक हैं आते-जाते ।

( ३ )

मजुमुखी वालाएँ सुन्दर  
पचम स्वर मे गाती हैं ;  
कुछ मुग्धाएँ राजपथों पर  
फूल बेचती जाती हैं ।

( ४ )

शीतल-मद-सुगंध आज को  
वायु बड़ी ही ध्यारी है ;  
फिर वसत ऋतु-सी आयी है  
फूल रही फुलवारी है ।

( ५ )

सोन नदी के तट पर सुन्दर  
बना हुआ विस्तृत उद्यान ;  
आज उसी मे सभी जनो ने  
समारोह का किया विधान ।

( ६ )

सभी वीर जब वहाँ आ चुके  
महामात्य तब यो बोले—  
“आज अश्रु-सरिता मे मेरी  
कोई निज पातक धोले।

( ७ )

राजन् ! मुझे क्षमा करना यदि  
कटु भाषा मे कुछ बोलूँ  
होगा यह अन्याय, न यदि मै  
विषम घड़ी मे मुँह खोलूँ।

( ८ )

एक बूँद भी रक्त रहेगा  
जब तक मेरी काया मे ;  
वृद्ध नहीं यह फँस सकता है  
कभी किसी की माया मे।

( ९ )

उस वेश्या-बाला के पीछे  
तुमने सबको दुखी किया ;  
प्यारी बहू हमारी का भी  
सारा सुख हा ! छीन लिया !

( १० )

गुप्त-वश के लिए हमारा  
तन-मन-धन है, जीवन है,  
सभी आपदाएँ सह सकता  
गुप्तवश-हित यह जन है।

( ११ )

गुप्त-नृपों का नमक सदा से  
मैंने अबतक खाया है;  
इसके लिए पूर्वजो ने भी  
मेरे रक्त बहाया है।

( १२ )

कैसे भला देख सकता था  
अनाचार की ये बातें ?  
जबकि देश पर विपद् पड़ी है  
हूण कर रहे हैं घाते।

( १३ )

यद्यपि वृद्ध, किन्तु कुछ मेरी  
दूट गयी तलवार नहीं ?  
उस पर जो बन्धो को ताके  
होगा क्या फिर वार नहीं ?

( १४ )

दुनिया मे फँस मत भूलो अब  
मेरे प्राणो के प्यारे ;  
गुप्तवश से मुझे मुहब्बत  
अस्त न हो इसके तारे ।

( १५ )

पिता-तुल्य समभाता तुमको  
भरी सभा मे मै भैया ;  
गुप्तवश की आज भँवर से  
शीघ्र निकालो तुम नैया !

( १६ )

ईश्वर ! कब तू दया करेगा !—”  
कह कर महामात्य रोए ;  
सारे योद्धा मंत्रमुग्ध थे  
तन की सब सुध-बुध खोए ।

( १७ )

दुखी हुए तब नृपति बहुत विधि  
बोले— “मै पछताता हूँ ;  
हूणो से लड़ने-भिड़ने का  
क्रम मै नया बनाता हूँ ।

( १८ )

महामात्य जी, दुखी न हो अब  
हम सब हूण भगाएँगे ;  
महावीर गोविन्दगुप्त कल  
हीं जालधर जाएँगे ”

( १९ )

बोल उठे गोविन्दगुप्त तब  
“कल सहर्ष मैं जाऊँगा ;  
किन्तु युद्ध की कुछ हालत मैं  
आज यहाँ बतलाऊँगा ।

( २० )

❀  
वाह्लीका कपिशा दोनो पर  
हूणो ने अधिकार किया ;  
नगरहार, गोंधार आदि के  
आगे का पथ रोक लिया ।

( २१ )

शिक्षित सैन्य जुटाओ जल्दी  
बर्बर जाति बढ़ो आती ;  
गिरि-सकट यदि पार कर लिया  
तो समझो इच्छत जाती ।

❀वाह्लीका तथा वाह्लीका दोनों रूप प्रयुक्त है ।

नौ

( २३ )

सेना-व्यय भी नहीं जा रहा  
वीर वहाँ दुख पाते हैं ;  
फिर भी रणबाँकुरे हमारे  
लपटो में मुस्काते हैं ।

( २३ )

शीघ्र व्यवस्था हो सुवर्ण की  
पल में प्रलय मचा देंगे ;  
हूणराज के साहस की हम  
पल में चिता रचा देंगे ।

( २४ )

महाकाल के भी सम्मुख जा  
दो-दो हाथ दिखाएँगे ।  
देश-प्रेम की बलि-वेदी पर  
हँस-हँस शीश चढ़ाएँगे ।

( २५ )

बाँके योद्धा सभी साथ में  
मेरे इस दम जाएँगे ;  
चन्द्रगुप्त के यश को हम सब  
दना वहाँ बढ़ाएँगे ।

## तृतीय सर्ग

( १ )

‘देवर ! तुम जाते हो लड़ने  
बोलो, अब कब आओगे ?  
दुःखप्रसिता निज भाभी का  
कब आ, दुःख बँटाओगे ?

( २ )

उस दिन अगर नहीं तुम आते  
तो अनर्थ बस हो जाता ;  
मेरा पचतत्व का पुतला  
मिट्टी बनकर सो जाता ।

( ३ )

महाराज की बात आज कल  
देवर, बड़ी निराली है ।  
तुमने तो अपनी आँखों से  
सब कुछ देखी-भाली है ।

( ४ )

मैं भी तो आखिर चूत्राणी  
इज्जत खो, क्या जीना है ?  
आज पिया, कल पिया, मृत्यु का  
प्याला सबको पीना है ।

( ५ )

यदि वेश्या-बाला आजाती  
पट्टमहादेवी बन कर—”  
“ता क्या तुम फिर सेवा करती  
यह कहती हो भाभी वर ?”

( ६ )

“नहीं, नहीं, मैं उसे पूजती  
अर्घ्य और चदन लेकर”  
पाजाती फिर उससे भाभी  
तुम कोई सुंदर-सा वर।”

( ७ )

“भोक भाड मे उसको देती  
किसको ? क्या उस बाला को?”  
“नहीं, नहीं, सानद रहे वे  
मैं उसके वर आला को।

( ८ )

“अच्छा देवि, विदा दो मुझ को  
जालंधर मैं जाता हूँ;  
हूणराज की सेना को मैं  
जाकर शीघ्र भगाता हूँ।”

( ९ )

“बेटा भी तो साथ तुम्हारे  
आज युद्ध मे जाएगा;  
जरा ध्यान उसका भी रखना  
चंचल है, दुख पाएगा।

( १० )

“भाभी, तुम क्यों घबराती हो  
कह दो, उसे न ले जाऊँ ;”  
नहीं उसे अब रोक समर से  
क्या मैं कायर कहलाऊँ ?

( ११ )

सिंहिनयो के बच्चे, देवर !  
महाकाल से इठलाते ;  
प्रलयंकर तूफानो मे भी  
मंद मंद वे मुस्काते ।

( १२ )

यह बालक है क्षत्राणी का  
रण में हाथ दिखाएगा ;  
सब चोटे सीने पर लेगा  
पीछे घाव न आएगा ।”

( १३ )

मुस्काए गोविन्दगुप्त फिर  
बोले—“धन्य महाभागे !  
ऐसी अच्छी भाभी पाकर  
भाग्य हमारे हैं जागे ।”

( १४ )

हाथ जोड़ कर स्कंदगुप्त फिर  
लेने लगा विदाई जब ;  
“युग-युग जीवो वीर कर्म कर”  
दी आवाज सुनाई तब ।

( १५ )

चूम लिया मा ने बेटे को  
झुक देवर ने चरण छुये ;  
फिर प्रणाम कर वे दोनो ही  
चलने को तैयार हुये ।

( १६ )

मा ने, भाभी ने आशिष दे  
उन्हे वहाँ से विदा किया ;  
आकर बाहर उन वीरो ने  
फिर सेना का मार्ग लिया ।



## चतुर्थ सर्ग

( १ )

हूणो की सेना आती है  
या टिड्डी-दल आता है ;  
सभी दिशाएँ कँप जाती है  
भूमण्डल थर्राता है ।

( २ )

किन्तु आर्य वीरो के आगे  
काल स्वयं भय खाता है ;  
इनके प्रणयकर नेत्रों में  
महाप्रलय मुस्काता है ।

( ३ )

इनकी असि क्या काल-सपिणो  
हूणों को डस जाती है ;  
कठालिङ्गन करने में वह  
अद्भुत कला दिखाती है ।

( ४ )

\*  
आज शतद्रु-तीर पर तो बस  
कल ही कुछ आगे बढ़कर ;  
छापा चारों ओर मारते  
दुष्ट, अनार्य हूण बर्बर ।

( ५ )

आर्य वीर सब आगे बढ़-बढ़  
क्या तलवार चलाते हैं !  
दुश्मन उन्हें देखकर उँगली  
दाँतो-तले दबाते हैं ।

( ६ )

उधर \*वत्सु-तट-हाल सुनो कुछ  
ईश्वर की अद्भुत माया ;  
उसकी माया का रहस्य कब  
कहो किसी ने है पाया ?

( ७ )

अर्ध सहस्र सैनिको को ले  
अग्निगुप्त आगे आए ;  
आर्य-नरो ने फिर हूणो को  
अपने जौहर दिखलाए ।

( ८ )

मारी मार, मचा दी रण में  
भगदड़ हूण-कुमारो मे ;  
नहा रहे थे शूरवीर अब  
असि-गङ्गा की धारों मे ।

( ९ )

सरिता बही रक्त की अब तो  
ढाले कच्छप बन जातीं ;  
लाशो की नावे वे बन कर  
अरे, तैरती हैं आतीं !

---

---

❧ आक्सस नदी, यह हिन्दूकुश पर्वत से निकलकर अरल सागर में गिरती है।

अठारह

( १० )

गृद्ध बैठकर आँख निकालें  
लाशों के वक्षस्थल पर ;  
गीदड़ नोच माँस खाते हैं  
जघाओ का घुर-घुर कर ।

( ११ )

रण-चण्डी भी आज मस्त हो  
खपर भर इतराती है ;  
घूँट गटागट पिये खून के  
फूली नहीं समाती है ।

( १२ )

भूत-पिशाच सैकड़ो ही तो  
नृत्य भयंकर करते हैं ;  
सुन्दर, छोटी चुड़ैलियों के  
लिए भगड़ते-मरते हैं ।

( १३ )

कड़-कड़, कड़-कड़ हड्डी तोड़ें  
मज्जा भी खाजाते हैं ;  
आँतों के वे हार बनाकर  
पहन-पहन इतराते हैं ।

( १४ )

लो देखो, पिशाचिनी आयी  
और लाश पर बैठ गयी ;  
फिर मुर्दे का पेट फाड़कर  
खाती कर तरकीब नयी ।

( १५ )

खोपड़ियो की गेद बना कर  
कन्दुक-क्रीड़ा करते है ;  
और खून की सरिता मे वे  
सब स्वच्छद विहरते हैं ।

( १६ )

इतने ही मे अग्निगुप्त ने  
कहा—“अरे मेरे वीरो !  
आर्य-वंश का रक्त बह रहा  
रग-रग मे है रणधीरो !

( १७ )

प्रपने महावीर दादा ने  
ज्ञानघता दहलायी थी ;  
दूर-दूर देशो मे अपनी  
वजय-ध्वजा फहरायी थी ।

( १८ )

वही रक्त तुममे बहता है  
बढ़ो-बढ़ो, वर वीर बढ़ो ;  
दुश्मन के सीने पर हँसकर  
चढ़ो-चढ़ो, वर वीर चढ़ो ।

( १९ )

रणचण्डी भूखी है इसकी  
सारी प्यास बुझादो तुम ;  
हूण-वश का अनाचार यह  
जग से आज मिटादो तुम ।

( २० )

लगे अगर भाला तिल-तिल पर  
फिर भी आह नहीं भरना ;  
समराङ्गण से हाय, भागना  
तो है जीते जी मरना ।

( २१ )

सिंह समान आज लड़कर यदि  
सभी वीर-गति पाओगे ;  
सुर-बालाओ से सम्मानित  
स्वर्ग चले सब जाओगे ।

( २२ )

यद्यपि हम थोड़ी संख्या में  
पर सिंहो को है क्या डर ?  
ये भेड़े हैं इनको खाओ  
खाओ, जा वीरो ! सत्वर !! ”

( २३ )

बढ़ी जोश में आगे सेना  
चमकी नगी तलवारें ;  
महाप्रलय की सर्पिणियों की  
रह-रह कर वे फुफकारें ॥

( २४ )

भगदड़ मची शीघ्र हूणों में  
किन्तु नयी सेना आयी ;  
उस सेना से आर्य-सैन्य ने  
शीघ्र पराजय हा ! पायी !!

( २५ )

आर्य-बाहिनी लड़ी खूब, पर  
गयी अन्त में सब मारी ;  
अग्निगुप्त के घाव हृदय में  
लगे बड़े ही थे भारी ।

( २६ )

मरने को मर गए किन्तु कब  
राष्ट्र-पताका को छोड़ा ?  
मरने को मर गए किन्तु कब  
समराङ्गण से मुँह मोड़ा ?

( २७ )

ऐसे वीर नहीं मरते हैं  
रहता उनका नाम अमर,  
देव-तुल्य दुनिया में पुजते  
धन्य-धन्य है ऐसे नर ।

( २८ )

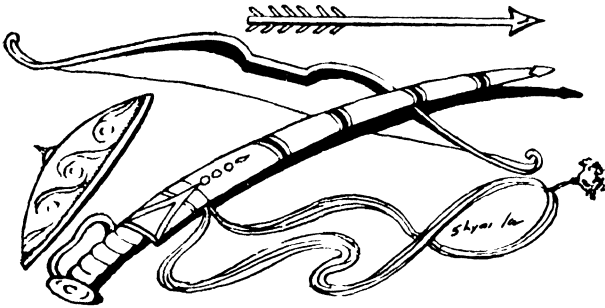
किन्तु भाग्य की बात इसी क्षण  
श्रीगोविन्दगुप्त आए ;  
और साथ वे अपने शिषित  
एक विशाल सैन्य लाए ।

( २९ )

हज्जा बोल दिया आर्यों ने  
हूण-वीर सब घबराए ;  
अब गोविन्दगुप्त के आगे  
कौन खड़ा रहने पाए ?

( ३० )

बुरी तरह से उन्हे खदेड़ा  
हृद के बाहर कर आए ;  
अग्निगुप्त के प्रेत-कर्म सब  
फिर विधियो से करवाए ।



## पंचम सर्ग

( १ )

“क्या सुन्दर वसत है आली !  
फूल आज मुस्काते हैं ;  
बड़े फबोले, बड़े सजीले  
कैसा हृदय चुराते हैं !

( २ )

वृत्त कर रहे हैं आलिङ्गन  
सुन्दर, सरस लताओं का,  
शम्बरारि शर छोड़ रहा है  
मृदु कम्पन कलिकाओं का ।

( ३ )

इस कोकिल की 'कुहू-कुहू' से  
मैं हूँ आज छली जाती ;  
इस दूर्वा-दल से भी देखो  
क्या सुवास सुखमय आती !

( ४ )

मधुप आज गुंजार रहे हैं  
शशिबालाओं का मन हर ;  
दिङ्मण्डल को सुरभित करती  
कुसुम-कामिनी, शुचि सुन्दर !

( ५ )

और रात्रि में चन्द्रदेव भी  
सुषमा ले आजाते हैं ;  
चतुर चकोरी के मन में वे  
नयी व्यथा उपजाते हैं ।

( ६ )

मलय-पवन करता अठखेली  
बालाश्रो, मुग्धाश्रो से,  
पट से निज मुख ढके खड़ी जो  
उन कोमल कलिकाश्रो से।

( ७ )

मदन-वाण चल रहा सब कहीं  
जल मे, थल मे, मधुवन मे;  
आज उठरहा जाने क्या है  
अम्मा, मेरे इस मन मे ई

( ८ )

नौजवान होते यदि राजा  
तो मा, कुछ अच्छा होता;  
तरुणाई मे तरुणी का तो  
एक तरुण ही दुख खोता।

( ९ )

फिर भी बहुत प्यार करते हैं  
कारा से है मुक्त किया;  
कितना धन वे नित्य भेजते  
अम्मा, अच्छा फॉस लिया।

( १० )

किन्तु मुझे गोविन्दगुप्त का  
लगता डर सब से भारी ;  
सब लोगो मे एक वही नर  
सच्चा है सत्ताधारी ।”

( ११ )

हँसकर कहा इन्द्रलेखा ने  
‘सब कुछ देखा जाएगा,  
महाराज के शुभ विवाह मे  
कैसे वह आ पाएगा ?

( १२ )

उसका भय मुझको भी सचमुच  
लगता है अनत, प्यारी,  
उसकी सूरत देख-देख मैं  
सपने मे डरती भारी ।

( १३ )

कापालिक ने, चन्द्रसेन ने  
किन्तु खूब षडयंत्र रचा ;  
राजा भी फँस गया जाल मे  
छल-कौशल से नहीं बचा ।

( १४ )

मारण-मत्र पढ़ा है उसने  
रानी भी मर जाएगी ;  
छुरी भोक या अन्य किसी विधि  
अपने प्राण गँवाएगी ।

( १५ )

साग काँटा दूर होरहा  
मौज बड़ी ही आएगी ;  
यह तेरी ही मा राजा को  
पुतली-नाच नचाएगी ।

( १६ )

महामात्य भी नहीं यहाँ है  
वह भी लड़ने धूर्त गया ;  
बुद्धदेव की अनुकम्पा से  
अवसर आया भला नया ।

( १७ )

पट्टमहादेवी तू जल्दी  
अब अनत, बन जाएगी ;  
थोड़े दिन में तू ही अपना  
सब पर हुकम चलाएगी ।

## षष्ठ सर्ग

( १ )

पट्टमहादेवी के कमरे  
मे अरुणा मुस्काती है ;  
कभी भाँकती वातायन से  
पंचम स्वर मे गाती है ।

( २ )

उसके भावी पति विजयी हो  
शीघ्र नगर मे आएँगे ;  
समराङ्गण की सारी बाते  
वे उसको बतलाएँगे ।

( ३ )

देवी की प्रतिमा के आगे  
ध्यान उन्हीं का करती है ;  
उस मनोज्ञ मूरत पर वह तो  
मतवाली हो मरती है ।

( ४ )

उसका ईश्वर एक वही है  
गुप्तवश का जो तारा ;  
उसके ही ऊपर अरुणा ने  
अपना तन-मन-धन वारा ।

( ५ )

पट्टमहादेवी प्रसन्न हो  
ईश्वर के गुण गाती हैं ;  
देवर, पुत्र कुशल से आएँ  
हरदम यही मनाती है ।

( ६ )

इतने ही मे बाँदी कोई  
अशुभ सूचना लाती है,  
'फिर हूणों का हुआ आक्रमण'  
कहकर वह रुक जाती है।

( ७ )

'आर्य वीर अब हाय ! यहाँ पर  
वर्षों मे आ पाएँगे ;  
और इधर होगी अनीति हा !  
काम बिगड़ सब जाएँगे।

( ८ )

महाराज फँस गए जाल मे  
वेश्या-वाला की माया ;  
अन्तर मे विष भरा पड़ा है  
कचन-सी यद्यपि काया।

( ९ )

किस मुँह से सब बात कूँ मै  
जीभ नहीं क्यो कट जाती  
कहने के पहले ही हा ! क्यो  
नही मेदिनी फट जाती ?

( १० )

महाराज का कल विवाह है  
शुरू हो गयी रँगरलियाँ;  
इतने मे आगयीं वहाँ पर  
अरुणा की सारी सखियाँ ।

( ११ )

'हाय हंत'—मुख से बस निकला  
है मेरा प्रिय स्कंद कहाँ ?  
देवर ! आओ मै अबला हूँ  
अति अनीति हो रही यहाँ !

( १२ )

होगी पट्टमहादेवी क्या  
हाय हंत, वेश्या-बाला !  
मेरे देवर, मुझे बचालो  
टूटा जीवन का प्याला ।

( १३ )

मै क्षत्राणी वीर वंश की  
सहन नहीं कर पाऊँगी ;  
रणडी-भङ्गए भरे महल में  
क्या मै जीती जाऊँगी ?

( १४ )

प्यारी अरुणा ! देवर होते  
तो फिर सब कुछ शुभ होता ;  
हा ! गोविन्दगुप्त, अब आओ  
मेरा रोम-रोम रोता ।

( १५ )

ऐसे देवर नहीं मिलेगे  
कभी किसी को पृथिवी पर ;  
देश, बन्धु, भाभी पर करदे  
जो सब जीवन न्योछावर ।

( १६ )

हर्ष कहाँ, प्रिय स्कंद कहाँ हो ?  
कौन यहाँ है महाविजन ;  
नट-बाला के सग रम रहे  
प्रियतम भी तो निष्ठुर बन ।

( १७ )

युग युग जीना प्रियतम सुख से  
अमर रहे वेश्या-बाला ;  
सुखी तुम्हारे सुख मे मैं हूँ  
पहनो प्राण ! सुमन माला ।

( १८ )

किन्तु प्रतापी पिता तुम्हारे  
का क्या नाम डुवाऊँगी ?  
कठिन कृपाण चठादे अरुणा  
अभी मार मर जाऊँगी । ”

( १९ )

लिया खड्ग भट बढ देवी ने  
रोका सभी जनो ने फिर ;  
“नहीं-नहीं, मत रोको मुझको”  
मूर्छित हुरीं धरा पर गिर ।



## सप्तम सर्ग

( १ )

“हाय, महानायक ! बतलाओ  
राज्य हो गया है भारी ;  
पट्टमहादेवी के शव की  
हो जाएगी अब खूबारी ।

( २ )

चन्द्रसेन है सेनापति अब  
लाश नहीं लेने देगा ;  
हाय, लाश मे अग्नि यथाविधि  
नहीं हमे देने देगा ।

( ३ )

धन्य-धन्य निज नाम अमर कर  
गयी स्वर्ग को तुम देवी ;  
पीछे ही देखो, आते हैं  
हम सब मातृ-चरण सेवी ।”

( ४ )

वृद्ध महानायक फिर रोए—  
“सब विधि वाम विधाता है !  
छुरी भोक कर हम लोगों से  
तोड़ा रिस्ता-नाता है !!

( ५ )

कृष्णगुप्त, तुम क्या कहते हो  
क्या शव पड़ा घिनाएगा ?  
जब तक भुजदण्डों में बल है  
यह न कभी हो पाएगा ।

( ६ )

उस नट-बाला के आगे जा  
निज सिर कौन झुकाएगा ?  
एक अकेला वृद्ध यही सब  
कौतुक कर दिखलायगा ।

( ७ )

चलो-चलो रथ मँगवाओ अब  
शव का सब सामान करो ;  
छोड़ो फिर इस नीच नगर को  
और कहीं प्रस्थान करो ।”

( ८ )

दोनों वीर चले फिर सत्वर  
मिला चद्र उनको पथ मे ;  
बोला-“अभिवादन न किया क्यो  
बने वीर बैठे रथ में ?

( ९ )

पट्टमहादेवी के शव को  
मै खाई मे फेकूँगा ;  
उस बुढ़िया के शव में हरगिज  
आग न मैं लगने दूँगा ।”

( १० )

गरज पड़े फिर रामगुप्त यो  
बोले—“क्या तू पागल है ?  
शव को आज रोक ले आ, क्या  
राजा मे भी वह बल है ?

( ११ )

ओ वेश्या के मित्र नारकी !  
किससे बातें करता है ?  
हट जा, हट जा, अब आगे से  
विना मौत क्यों मरता है !”

( १२ )

चन्द्रसेन ने तब असि लेकर  
उन पर घातक वार किया ;  
कृष्णगुप्त ने उसे वचाकर  
सल्टा और प्रहार किया।

( १३ )

सहन सका वह वार वीर का  
भागा, पर न भाग पाया ;  
कृष्णगुप्त फिर उसे दौड़ कर  
चोटी पकड़ खींच लाया।

( १४ )

खूब कुटम्भस की उसकी फिर  
खन्दक मे उसको डाला,  
दोनों वीर बड़े फिर आगे  
नहीं ज़रा देखा-भाला ।

( १५ )

पहुँच गए फिर वे महलों मे  
शव पर रोए-चिल्लाए;  
आज वीर गोविन्द नहीं, फिर  
कौन यहाँ बल दिखलाए !

( १६ )

बड़ीं सान्त्वना दी अरुणा को  
'बेटी ! तुम अब धैर्य धरो ;  
परम पिता सब का रक्षक है  
सोच, हृदय मे नहीं डरो

( १७ )

आत्मा अजर अमर है पगली,  
क्यों तू इतना रोती है ?  
तू तो रो सिर फोड़ रही है  
परमा सुख से सोती है ।”

( १८ )

बड़ी मुश्किलो से नायक ने  
अरुणः को समझा पाया,  
विप्र-वृन्द पढ़ रहा मंत्र था  
रानी का शव उठवाया।

( १९ )

कुछ सैनिक जो स्वामिभक्त थे  
ले तलवारें जाते थे;  
नगर-निवासी ज्यादातर तो  
भय से पास न आते थे।

( २० )

राजाज्ञा गालिब थी सब पर  
पर मन मे देते गाली;  
कहते—“राजा बड़ा बुरा है  
दया करो हे वनमाली!”



## अष्टम सर्ग

( १ )

आज वीर गोविन्दगुप्त  
खूब हूण-सेना मारी ;  
करने लगे शिविर मे अपने  
फिर सोने की तैयारी ।

( २ )

इतने ही मे अश्वारोही  
सागध एक वहाँ आया ;  
अभिवादन कर सैनिक-ढँगसे  
आँखों, मे आँसू लाया ।

( ३ )

“आय ! कहूँ क्या, क्षमा करो बस  
हा ! अनर्थ हो गया बड़ा !  
पट्टमहादेवी का शव भी  
हा ! दो दिन तक रहा पड़ा ।

( ४ )

हाय फल्गुयश नट की बेटी  
पट्टमहादेवी है आज ;  
अत्याचार प्रजा पर होते  
बिगड़ गया है राज-समाज ।

( ५ )

हाय हत ! ”—कहकर सेवकने  
प्राणपखेरू उड़ा दिए !  
रोते हैं गोविन्दगुप्त अब  
लाश गोद मे हाय, लिए ।

( ६ )

धन्य धन्य प्रिय भाई तुमने  
अपना धर्म निभाया है ;  
इस गोविन्दगुप्त को तुमने  
अपना ऋणी बनाया है ।

( ७ )

हाय देवि, तुम भी अब जग में  
नहीं रहों हो गयीं कहाँ ?  
कौन मातृ-सम प्यार करेगी  
मुझे देवि ! अब कहो वहाँ । ”

( ८ )

किन्तु शान्त फिर हुए शीघ्र ही  
राजपुत्र को बुलवाया ;  
राजपुत्र भी लाश देखकर  
विस्मित होकर घबराया ।

( ९ )

“है ! यह क्या चाचाजी, कहिए  
कौन, कहाँ से यह आया ?”  
“मातृ-भूमि का सच्चा सेवक  
खबर एक यह है लाया ।

( १० )

निशिवासर यह यात्रा करके  
आज यहाँ तक आया है ;  
और किसी भय से यह पथ मे  
अश्व भगाता लाया है ।

( ११ )

बड़ा परिश्रम पड़ा वीर पर  
त्याग दिए आ प्राण यहाँ ;  
चिता एक जल्दी रचवाओ  
जाना मुझको आज वहाँ । ”

( १२ )

‘कहाँ ?’-‘पाटलीपुत्र’-‘किसलिए?’  
‘यह मत पूछो पुत्र, भला !  
आकर जल्दी बतलाऊँगा ;  
करो शीघ्रता वक्त चला । ’

( १३ )

शोकातुर हो फिर वे बोले  
राजपुत्र का हठ लखकर ;  
जरा देर के लिए रक्त का  
भूलो रिश्ता वीर प्रवर !

( १४ )

मैं सेनापति, तुम सब सैनिक  
जो कहता सब वीर ! करो ;  
मेरे इस आज्ञा-पालन मे  
मंगल है, मत वीर ! डरो ।

( १५ )

आओ ! वीरो देखो, सुनलां  
मत मन मे घबराओ तुम ;  
ये सेनापति हुए आज से  
इन पर मर-मिट जाओ तुम ।

( १६ )

ये सेनापति नये तुम्हारे  
लपटो मे बढ़ जाँगे ;  
महाभयंकर दुर्गो पर भी  
ये सहर्ष चढ़ जाँगे ।

( १७ )

इनके साथ वीर मित्रो ! तुम  
तूफानो मे मुस्काओ ;  
हूणो की सेना में जाकर  
महाकाल से इठलाओ ।

( १८ )

सब वीरो की आज कृपा से  
हमने हूणों को मारा ;  
फिर भी वे अवश्य आँगे  
सचमुच इसी मार्ग-द्वारा ।

( १९ )

कभी न हटना मित्र, यहाँ से  
यही प्रवेश-द्वार प्यारा ;  
चाहे अपना और पराया  
मगध-मध्य जाए मारा ।

( २० )

हे युवराज ! मगध की सीमा  
के बाहर ही तुम रहना ;  
इनके साथ वीर मित्रो, तुम  
हरदम रह दुख-सुख सहना ।

( २१ )

शपथ करो मेरे रणधीरो !  
जब तक तन मे रक्त रहे ;  
राजपुत्र की रक्षा मे बस  
लाल-लाल यह खून बहे ।

( २२ )

फूँको और उड़ादो भूधर  
अगर सामने पड़ जाए;  
महाकाल का नाम मिटादो  
यदि तुमसे वह लड़ जाए।

( २३ )

प्रलयकर सागर से गरजो  
अजगर सम तुम फुंकारो;  
अर्जुन के गाण्डीव, भीम की  
गदा बनो, रिपु संहारो।

( २४ )

अगर पिता की भी आज्ञा हो  
तो भी तुच्छ मानना तुम;  
सबसे ज्यादा जगतीतल मे  
मेरा हुक्म जानना तुम।

( २५ )

मैं तो पाटलिपुत्र जा रहा  
कार्य देश का अब करने;  
आज मगध का अधिकार क्या  
आपगा फिर विधि हरने?

( २६ )

अग्नि-परीक्षा शुरू हुई है  
तुम बलशाली वीरो की ;  
शान अटल रहती है जग मे  
शूरवीर रणधीरो की ।

( २७ )

जब तक तन मे प्राण, न प्रणको  
भाई ! कभी भुलाना तुम ;  
मै जो शपथ ले रहा हूँ वह  
कहीं भूल मत जाना तुम ।”

( २८ )

कह इतना गोविन्दगुप्त ने  
प्रेत-कर्म सब वहाँ किया ;  
पद-चिह्नों को छोड़, शीघ्र फिर  
मगध देश का मार्ग लिया ।



## नवम सर्ग

( १ )

महामात्य को कृष्णगुप्त ने  
जभी सूचना दी जाकर ;  
छोड़ पुरुषपुर शीघ्र चल दिया  
वृद्ध वहाँ से अकुलाकर ।

( २ )

बहुत दिनों की मजिज़ तय कर  
मगध देश में वे आए;  
किन्तु दुर्दशा देख यहाँ की  
आँखों में आँसू लाए।

( ३ )

राज-काज भूला था राजा  
प्रेम-पाश में हा! फँसकर;  
वह कादम्ब, कामिनी में ही  
पागल रहता निशिवासर।

( ४ )

बहुत दिनों के बाद एक दिन  
बैठा अनुपम राज-समाज;  
महामात्य भी गए वहाँ पर  
वीर वेश में अपने आज।

( ५ )

महामात्य की चौकी पर फिर  
वे जाकर आसीन हुए;  
देखा—गुप्त-वश के दीपक  
अब सब पवनाधीन हुए।

( ६ )

बड़ा विकल हो गया वृद्ध वह  
आँखों में सुखी छाया ;  
इतने ही में राजा-रानी  
दिष्ट सभा में दिखलायी ।

( ७ )

सबने दोनों का अभिवादन  
किया वहाँ हर्षित हो फिर ;  
महामात्य जी ने रानी को  
पर न झुकाया अपना सिर ।

( ८ )

गरज पड़ी तब वहाँ सिहिनी  
बोली—“तू है कौन अरे !  
अदब-कायदा नहीं जानता  
बैठा होकर मौन अरे ॥”

( ९ )

बोल उठे तब महामात्य यों  
“देवि ! तुम्हीं सिखलादो अब ;  
अपनी आज पुरानी पटुता  
देवि ! यहाँ दिखलादो सब ।

( १० )

फिर सम्राट को सम्बोधन कर  
महामात्य यो कहते है ;  
श्रीमन् हा ! यह क्या कर बैठे  
वीर वहाँ दुख सहते हैं ।

( ११ )

आज श्रगाली आई श्रीमन् !  
सिंहों पर शासन करने ;  
ये श्रगाल कब जा सकते है  
मातृ-भूमि का दुख हरने !

( १२ )

सब कुछ सुना हाय, जो प्रभु ने  
प्रिय जनता को कष्ट दिया ;  
पद्महादेवी के शव का  
भी हा ! हा !! अपमान किया!!!

( १३ )

हाय, राज्य में आज आपके  
ये रँगरलिबाँ होती है ;  
सच मानो तो महानाश के  
बीज विषम ये बोती है ।

( १४ )

दाग लग गया गुप्तवंश मे  
अब क्या यह धुल पाएगा ?  
पटरानी की हत्या का क्या  
भेद न यह खुल पाएगा ?

( १५ )

दैव हुआ प्रतिकूल सभी विधि  
देश नष्ट हो जाएगा ।  
मातृभूमि का सारा गौरव  
क्या सचमुच सो जाएगा ?

( १६ )

देश चाहता रणवीरो को  
जो प्रण पर मर-मिटजाएँ ;  
उन वीरो की उन तलवारो को  
जो जौहर दिखलाएँ । ”

( १७ )

“क्या वकता है वृद्ध अरे ! बह”  
पटरानी बोली—“पकड़ो ;  
इस मुँहचढ़े वृद्ध को जल्दी  
जजीरो मे अब जकड़ो ।

( १८ )

“कौन पकड़ सकता है मुझको  
भरी सभा मे बतलाए ?  
ऐसा कौन लाल माई का  
जो मेरे सन्मुख आए ? ”

( १९ )

महामात्य का सुन दहाड़ना  
चन्द्रसेन कँप जाता है,  
बहुत दूर है अरे, पकड़ना  
नहीं पास तक आता है ।

( २० )

“उठो, उठो, अब मुझे पकड़ लो  
खड़ा वृद्ध है यह निर्भय ;  
मुझको वही पकड़ सकता है  
जो साहस रखता अक्षय ।

( २१ )

महाराज की यदि आज्ञा हो  
तो बन सकता हूँ वदी”  
अब अनत बोली निज पति से  
“यह बाते करता गद्दी ।

( २२ )

गिरफ्तार इसको करवाओ  
घाघ बढ़ा बुढ़ा भारी ;  
रजा-द्रोह से भरी पड़ी है  
इसकी ये बातें सारी।”

( २३ )

किए अधोमुख अब तक भूपति  
बोले—“अच्छा अभी सही ,  
महामात्य जी ! फिर से कहना  
अभी अभी जाँ बात कही।”

( २४ )

राज-द्रोह के अपराधी तुम  
गिरफ्तार हो जाओगे ;  
ऐसी बातें करने से अब  
कारा में पड़ताओगे।”

( २५ )

बोल उठे तब महामात्य यों  
“धन्य धन्य, तुमको श्रीमन !  
आज आपकी ये बातें सुन  
धन्य हुआ मेरा जीवन !

( २६ )

अब मैं राज-द्रोह करता हूँ  
नमक आपका ही खाकर !  
गुप्तवंश के पूर्व-पुरुष सब  
लखो स्वर्ग से भहराकर !!

( २७ )

गुप्तवंश के हाड़-मॉस है  
गुप्तवंश का यह तन है ;  
गुप्तवंश के लिए निछावर  
जीवन है, तन-मन-धन है ।

( २८ )

पिता-तुल्य तुम मुझे मानते  
अब तक थे मेरे प्यारे ;  
मरते समय हाथ फिर मेरे  
क्यो ये वचन-बाण मारे । ”

( २९ )

अब अनत क्रोधित हो बोली  
“खूब वक्तृता देता है ;  
जल्दी वंदी इसे बनालो  
व्यर्थ समय यह लेता है । ”

( ३० )

महाराज फिर हाथ उठाकर बोले—“अब इनको पकड़ो, महामात्य को आगे बढ़कर लौह-श्रंखला में जकड़ो।”

( ३१ )

“महामात्य को आगे बढ़कर लौह-श्रंखला में जकड़ें; ऐसा कौन लाल माई का महामात्य को जो पकड़े ?”

( ३२ )

कहते हुए वहाँ पर सहसा बस गोविन्दगुप्त आए; देख सिंह को अपने सन्मुख महाराज भी थराए।

( ३३ )

“महामात्य को अवनोतल में कौन पकड़नेवाला है? अब नासूर बन गया सहसा वह साधारण छाला है।

( ३४ )

धिक धक ! तुमने पूज्य पिताकी  
कीर्ति-कला सब धो डाली ;  
जन जन आज दे रहा तुमको  
सच्चे दिल से है गाली ।

( ३५ )

जब राजा बुद्धदिल हो जाता  
राज्य नष्ट हो जाता है,  
और क्रान्ति का जन-जन उर में  
बीज विपम वो जाता है ।

( ३६ )

निश्चय होता आज मुझे हा !  
हूण यहाँ पर आँगे,  
पुण्यभूमि को हा ! बर्बर वे  
अब पददलित बनाएँगे ।

( ३७ )

हूणो से लड़भिड़ कर हम सब  
अपना रक्त बहाते हैं ;  
किन्तु इधर भूपाल हमारे  
उत्सव रोज़ मनाते हैं ।

( ३८ )

ऐसा राजा नहीं चाहिए  
किसी देश का पृथिवी पर ;  
ऐसा राजा हमें चाहिए  
जो यथार्थ में होवे नर ।

( ३९ )

रैयत को जो नहीं पुत्रवत्  
राजा समझेगा अपना ;  
तो फिर मूढ़ राज्य करने का  
व्यर्थ देखता वह सपना !

( ४० )

हाय, तुम्हारे लिए हत हा !  
भाभी ने वलिदान किया ;  
मैंने अब तक अहा ! आपका  
था कितना सम्मान किया ।

( ४१ )

अरुणा का भी पता नहीं है  
क्या उसको भी खा डाला ?  
हाय, अभागी उस देवी का  
पड़ा नीच जन से पाला !

( ४२ )

इस सिंहासन पर चमकेगा  
गुप्तवंश का वर तारा ;  
मेरी भावी का प्रिय बेटा  
वीर, धीर, त्यागी न्यारा ।

( ४३ )

यह सिंहासन आज आपके  
योग्य नहीं है त्यागो अब ;  
वीरों का दरबार नहीं यह  
जाओ, जाओ, भागो सब । ”

( ४४ )

भगदड़ तब मच गई सभा मे  
महाराज भी खुद भागे ,  
फूटे भाग इन्द्रलेखा के  
जो कुछ दिन पहले जागे ।

( ४५ )

पिछले सैनिक बोल उठे सब  
“जय गोविन्दगुप्त की जय ;  
जबतक जल गङ्गा यमुना मे  
कीर्ति-कौमुदी हो अक्षय ।

## दशम सर्ग

( १ )

मैं अबला हूँ अब दुनिया मे  
मेरा कोई नहीं कहीं ;  
इस अरुणा का अबनीतल मे  
अब कोई अबलम्ब नहीं ।

( २ )

चन्द्रसेन पापी से बच कर  
मैं भिखारिणी हो भागी ;  
अपने पूज्य पिता-माता की  
सब सम्पत्ति अरे, त्यागी

( ३ )

हा ! अनत के दुष्ट पिता ने  
किस कुदृष्टि से था ताका ;  
अंधकार की क्या विनाशिनी  
कही मगध मे थी राका ?

( ४ )

वीर पितृव्य अगर तुम होते  
तो होती यह दशा नहीं ,  
मुझ अभागिनी का महलों मे  
क्या कोई था सगा कही ?

( ५ )

मा ने मेरा प्यार देखकर  
मुझको यह बतलाया था ;  
राजपुत्र से शादी करने  
का शुभ पाठ पढ़ाया था ।

( ६ )

राजपुत्र के कर मे मेरा  
हाथ उन्हीं ने दिया अरे ;  
किन्तु खबर कैसी थी आई  
राजपुत्र भी जूझ मरे ।

( ७ )

संन्यासी दादा से फिर मै  
गयी बहुत समझाई थी ;  
संन्यासी दादा ने वह तो  
भूठी खबर बताई थी ।

( ८ )

किन्तु आठ दिन के ही अन्दर  
वे भी आह ! सिधार गए ,  
इस नन्हीं-सी हाय, जान पर  
पड़ते दुख है नित्य नए !

( ९ )

मेरा यह अनुमान ठीक है  
ठीक खबर वह लाया था ;  
भूठी खबर बता दादा ने  
मेरा मन बहलाया था ।

( १० )

किन्तु शोक मे राजपुत्र के  
दादा ने त्यागा ससार ;  
मैं भी अब यह देह नष्ट कर  
दिखलाती हूँ अपना प्यार ।

( ११ )

मेरे तुम प्रिय स्कन्द रहोगे  
जन्म जन्म जन्मांतर में ;  
आज बड़े तूफान उठ रहे  
मेरे सूने अंतर मे ।

( १२ )

जहाँ जन्म दे जगज्जनक बस  
तुमको ही वर पाऊँ मैं ;  
अपनी प्यारी मा का कहना  
शत शत जन्म निभाऊँ मैं ।

( १३ )

अलग आज तुम से मैं प्यारे !  
क्या जी सकती हूँ जग मे ?  
प्यारा देश नष्ट होता है  
हृण फिर रहे मग-मग मे ।

( १४ )

हरे! हरे! यह सेना आती  
हूणो की है मेरी ओर ;  
रण-वाद्यो का होता कैसा  
इनके हा! प्रलयंकर शोर !

( १५ )

आर्यपुत्र, अरुणा को देखो  
तुमसे मिलने आती है—”  
इतना कहकर हाय, चिता में  
वह देवी गिर जाती है ।

( १६ )

अरुणा! अरुणा!! मेरी अरुणा!!  
क्या निष्ठुरे, तुझे भाया ॥ ”  
कहता हुआ वहाँ पर सहसा  
युवक एक दौड़ा आया ।

( १७ )

किन्तु व्यर्थ अब हुआ दौड़ना  
वह तो प्राण खोचुकी थी ;  
राजपुत्र की प्यारी अरुणा  
जलकर खाक होचुकी थी ।

( १८ )

“हाय हंत तुमने यो अरुणा  
मुझे अकेला ही छोड़ा !  
हाय, दुखो से घबराकर ही  
मुझसे यों नाता तोड़ा !!

( १९ )

अरुणा ! अरुणा !!” राजपुत्र कह  
बड़ा चिंता में गिरने को ;  
कहा हर्ष ने पकड़—‘बंधु, यह  
शोक-सिन्धु है तिरने को ।

( २० )

आज तुम्हीं पर आर्य-राज्य की  
लगी सभी आँखें भैया ;  
चतुर खिवैया तुम्हीं एक हो  
डूब रही जजर नैया !!

( २१ )

बन्धु, देश के लिए सुरक्षित  
रखो यह अपना जीवन ;  
बन्धु, देश के लिए निष्ठावर  
कर देगे हम तन-मन-धन ।

( २२ )

पूज्य पिता ने हमें बुलाया  
जल्दी चलो चलें भाई !  
देखे चलकर मगध देश पर  
कहाँ, कौन आफत आई ।”

( २३ )

इतने ही में अश्व भगाता  
एक सवार वहाँ आया;  
“महाराज को ज़हर दिया है  
चन्द्रसेन ने”—बतलाया ।

( २४ )

स्कन्दगुप्त बोले क्रोधित हो  
“बतलाओ है चन्द्र कहाँ ?  
क्या वच सकता नीच नारकी  
छिपकर मुझसे यहाँ वहाँ ।”

( २५ )

अश्वारोही बोला—“श्रीमन् !  
उसने पूरा फल पाया ;  
श्रीगोविन्दगुप्त ने उसको  
है कुत्तों से फड़वाया ।

( २६ )

हरिवल और इन्द्रलेखा को  
भी है समुचित दण्ड मिला ,  
कापालिक के वध से सचमुच  
प्रजावर्ग-उर-कमल खिला ।”

( २७ )

“अच्छा हर्ष, हुक्म दो जल्दी  
सैनिक सब प्रस्थान करें ;  
चलो देश के लिए आज हम  
सब जीवन बलिदान करें । ”



उन्हत्तर

## एकादश सर्ग

( १ )

बड़ी खुशी है आज नगर मे  
फिर अच्छे दिन आये है ;  
आर्य-वीर हूणो से लड़कर  
विजय-सँदेसा लाये है ।

( २ )

राजतिलक है आज आर्य का  
भूले सभी अमगल है ;  
कहते—“ये सब हमलोगो के  
पावन कर्मों के फल है।”

( ३ )

आज नगर पर इन्द्रपुरी भी  
हुई स्वय न्योछावर है ;  
इसकी शोभा देख-देख तो !  
रीभा स्वय पुरन्दर है।

( ४ )

गुप्तवश के सारे योद्धा  
तथा महा-पद-अधिकारी  
सब एकत्र हुए बैठे है  
आज खुशी उनको भारी।

( ५ )

महामात्य गोविन्दगुप्त से  
बोले—“अब मत देर करो ;  
अच्छा कार्य शीघ्र ही शुभ है  
आकर सिर पर मुकुट धरो।”

( ६ )

मुकुट उठा गोविन्दगुप्त ने  
स्कन्दगुप्त को पहनाया ;  
जयजयकार हुआ फिर भारी  
अम्बर सारा थर्राया।

( ७ )

बोले—‘आज देश के नभ में  
है नैराश्य-घटा छायी ;  
उसकी ही दानवता सबको  
आज यहाँ प्रसने आयी।

( ८ )

इन नैराश्य-घटाओं को तुम  
बन कर पवन विदीर्ण करो ;  
सदा देश के लिए जियो तुम  
और देश के लिए मरो।

( ९ )

हर्षगुप्त से भी ज्यादा तुम  
सचमुच मुझको प्यारे हो ;  
तुम्हीं चमकते गुप्तवंश के  
भैया ! उज्ज्वल तारे हो ।

( १० )

पुत्र-समान प्रजाको अपने  
प्रियवर, सदा मानना तुम ;  
इसके सुखदुख मे निज सुखदुख  
प्रियवर, सदा जानना तुम ।

( ११ )

यद्यपि दुख भाई भाभी का  
अरुणा का भी है भारी ;  
फिर भी सुखी आज मैं कितना  
देख तुम्हारी मति न्यारी ।

( १२ )

भाभी ने भी कहा हाय, था  
अरुणा से शादी करना ,  
किन्तु दुखों मे उस देवी को  
पड़ा हाय, बरबस मरना ।

( १३ )

बेटा ! समझ रहा मैं सब कुछ  
जो कुछ है तेरे मन मे ;  
त्यागी ! तेरी नहीं तनिक रुचि  
राज्य, कामिनी, कंचन मे ।

( १४ )

मैं भी ऐसे वीर पुत्र को  
वीर महादेवी दूँगा,  
कायर पट्टमहादेवी दे  
जग में नहीं अयश लूँगा।”

( १५ )

सब निस्तब्ध समा थी अबतक  
मत्र-मुग्ध-सी खड़ी हुयी;  
तुरत म्यान से असि को खीचा  
जो कटी मे थी पड़ी हुयी।

( १६ )

दमक दामिनी उठी सभा में  
वीर पितृव्य बड़े आगे;  
आर्य-पट्ट पर रख कर बोले  
सचमुच आज भाग्य जागे।

( १७ )

हुई आज से सबल सम्राज्ञी  
यह तलवार निराली है;  
सदा समय पर साथ दिया है  
मैंने देखी-भाली है।

( १८ )

नयी महादेवी सचमुच ही  
निष्कलक, शुचि, निर्मल है ;  
अमर रहेगी कीर्ति तुम्हारी  
जब तक गंगा मे जल है ।

( १९ )

राज्य करो सुख से अब बेटा !  
हर्ष तुम्हारे है अर्पण ;  
इसको अपना सदा जानकर  
पुत्र, निभाना मेरा प्रण ;

( २० )

मेरी क्या मैं तो जाऊँगा  
शीघ्र युद्ध अब करने को ;  
हूण दुष्ट फिर बढ़ आए है  
इन हाथो से मरने को ।

( २१ )

तुमको आज सम्राट देखकर  
खुश है रोम रोम मेरा ;  
पुत्र, चाहता इसी खुशी मे  
मरूँ देखकर मुख तेरा

( २२ )

है । यह क्या कह गया अरे हा ।  
बन्धु-कलक मिटाना है,  
धोकर अपने लाल रक्त से  
उसको अभी वहाना है ।

( २३ )

जिससे दुनिया कह न सके यह  
इसका भाई था कायर ;  
जाने क्यों फँस गया जाल में  
बन्धु हमारा था शत्रु नर !

( २४ )

महामात्य जी, मैं तो लड़कर  
अपने प्राण गँवाऊँगा ;  
हूणों का मैं दूर-दूर तक  
नाम-निशान मिटाऊँगा ।

( २५ )

या तो हूण रहेगे जग मे  
या मैं ही रह पाऊँगा ;  
आर्य-राज्य को सभी तरह से  
मैं निश्शक बनाऊँगा ।

( २६ )

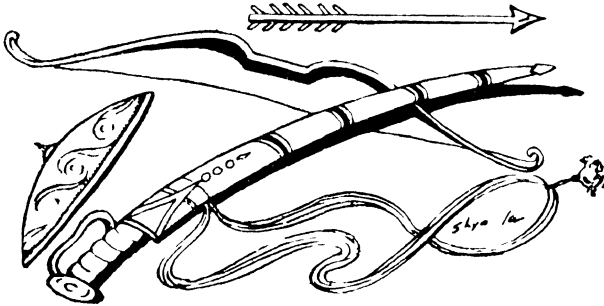
सुन वाते गोविन्दगुप्त की  
महादुखी भूपाल हुये  
आखो मे आगये अश्रुतव  
दौड़े, भेटे, चरण छुये ।

( २७ )

“चाचा जी, ऐसा मत कहिए  
सेवक है तैयार सदा;  
“किन्तु युद्ध मे बेटा, तेरा  
अब हैं जाना नहीं बदा ।

( २८ )

मै ही जाकर उन लोगो के  
छक्के शीघ्र छुड़ाऊँगा ;  
मै गोपाद्री-दुर्ग पर जल्दी  
विजय-ध्वजा फहराऊँगा ।



सतत्तर

## द्वादश सर्ग

( १ )

महाम्नात्य जी ! राज-कार्य की  
कैसी आज अवस्था है ?  
प्रभु-चरणों के ही प्रताप से  
सुंदर सभी व्यवस्था है ।

( २ )

सिंह और मृग एक घाट पर  
आकर पानी पीते हैं ;  
प्रभु-चरणो की आज्ञा कृपा से  
सब स्वतंत्र हो जीते है । ”

( ३ )

“सुनते है गोपाद्रि-दुर्ग पर  
हूणो का अधिकार हुआ ;  
महामात्य जी, अब सिंहासन  
सचमुच मुझको भार हुआ ।

( ४ )

बहुत हाथ, मैंने समझाया  
मगर पितृव्य नहीं माने ;  
उस दुर्भेद्य दुर्ग की हालत  
अब अखिलेश्वर ही जाने ।

( ५ )

महामात्य जी मेरे मन मे  
जाने क्या क्या आता है ।  
बाईं आँख फरकती मेरी  
सचमुच वाम विधाता है ।

( ६ )

वीर पितृव्य कुशल से होवे  
ईश्वर ! तू इतनी करना ;  
समराङ्गण मे उनके तू ही  
दारुण दुःखो को हरना । ”

( ७ )

वीर धीर कब शकुन मनाते  
राजन् ! यह तो बतलाओ ?  
रण पर चढ़कर लौह चवाना  
उनका, नहीं भूल जाओ । ”

( ८ )

महामात्य, यह सच है कहना  
मै भी नहीं मानता हूँ ;  
पर जो जो मन मे उठता है  
मै ही उसे जानता हूँ ।

( ९ )

राज-कार्य सब सौंप आपको  
मै भी रण मे जाऊँगा ,  
समराङ्गण मे चाचा जी का  
जाकर हाथ बँटाऊँगा । ”

( १० )

“राजन् ! यह तो ठीक नहीं हैं  
तुम अब हो युवराज नहीं ;  
स्वयं सम्राट युद्ध को जाएँ  
तुमने क्या यह सुना कहीं ? ”

( ११ )

“महामात्य जी, यह मत कहना,  
मैं सेवक हूँ, सेव्य नहीं ;  
मैं तो सेवक-धर्म निभाऊँ  
रण में, घर में सभी कहीं ।

( १२ )

वे तो हा ! लड़ रहे अकेले  
बैठा मैं कायर घर पर ;  
नहीं नहीं, यह ठीक नहीं है  
जाऊँगा मैं अब सत्वर ।

( १३ )

राज-कार्य की पूर्ण व्यवस्था  
तुमको ही करनी होगी ;  
सभी मुसीबत प्रजावर्ग की  
तुमको ही हरनी होगी ।

## त्रयोदश सर्ग

( १ )

महावीर गोविन्दगुप्त से  
हूण आज थरते हैं;  
देख वीरता उनकी, उँगली  
दाँतो-तले दबाते हैं।

( २ )

समराङ्गण मे वे लगते है  
महाकाल से प्रलयकर ;  
यद्यपि वृद्ध किन्तु हूणो को  
मार रहे हैं बड़ बड़कर ।

( ३ )

जिधर उठ गया खड्ग उधर ही  
रण-चण्डी मुस्काती है ;  
महावीर के बल-विक्रम का  
सुयश-गान वह गाती है ।

( ४ )

लिये भीम-भर्जुन की ताकत  
धीर बढ़ा वह जाता है ;  
लिये हिमालय का सीना वह  
चाणों से टकराता है ।

( ५ )

लेभ्रू-भंग मात्र मे आँधी  
आँखो मे अंगार लिए ;  
तूफानों पर चढ़ा जारहा  
महाप्रलय का प्यार लिए ।

( ६ )

सेना यद्यपि रही बहुत कम  
फिर भी अहा ! बढ़े जाते ;  
गरुणध्वज शुभ लिए हाथ मे  
कैसे भव्य नजर आते !

( ७ )

हूणो ने ऊपर से आहा !  
गरभ तेल, पत्थर, भाले !  
लक्ष्य बना गोविन्दगुप्त को  
देखो कैसे है डाले !!

( ८ )

पर यह वीर ज़रा भी उनकी  
है परवाह नहीं करता ;  
महाकाल से लड़नेवाला  
कहो काल से कब डरता ?

( ९ )

वाम हाथ मे गरुणध्वज ले  
दक्षिण में तलवार लिए ;  
बढ़े दुर्ग की दीवारो पर  
साहस अपरम्पार लिए ।

( १० )

उधर दूर से महाराज को  
आती सेना ने देखा ;  
स्कंदगुप्त पागल हो दौड़े  
मुख पर ले विषाद-रेखा ।

( ११ )

हुए सैकड़ों वार उधर से  
फिर भी गरुणध्वज चमका ;  
महावीर के महातेज का  
सौरभ, सेना में, गमका ।

( १२ )

इतने ही में तुरत दुर्ग का  
फाटक खुला, हूण भागे ;  
इस फाटक के खुलने से ही  
सचमुच बड़े भाग्य जागे ।

( १३ )

आगे बढ़कर स्कंदगुप्त ने  
देखा दृश्य भयावह फिर ;  
गरुणध्वज को उच्च उठाए  
मूर्छित हुआ एक जन गिर ।

( १४ )

“ वीर !पतृव्य ! आपने कैसा  
आज देश का काम किया !  
फिर उनके शरीर को बड़ भट  
निज हाथो मे थाम लिया ।

( १५ )

घाव अनेको ये शरीर पर  
लिया,अक में उन्हे ।लटा;  
फिर रोकर बोले-“क्या सचमुच  
आर्य-वश का सूर्य मिटा ? ”

( १६ )

इजने मे गोविन्दगुप्त ने  
अपनी आँखो को खोला !  
बड़े ध्यान से देख सभी को  
फिर वह वीर यही बोला—

( १७ )

“तुम्हें, हृष को देख यहाँ पर  
मुझे खुशी अब भारी है ;  
योद्धाओ से, तुमसे, सबसे  
घिनती ] यही हमारी है ।

( १८ )

जियो, जियो तुम सदा देश-हित  
स्वाभिमान रख कर जग में ;  
आर्य रक्त की इफ़जत रखना  
बहता है जो रग-रग में ।

( १९ )

बेटा ! हर्ष तुम्हारा बेटा  
इसको सदा निभाना तुम ;  
यह भी अपने पिता-तुल्य है  
इसे भूल मत जाना तुम ।

( २० )

हर्ष ! तुम्हारे ये भाई हैं  
इनको सदा मानना तुम ;  
मेरे से भी ज्यादा बेटा  
इनका हुक्म जानना तुम ।

( २१ )

सदा देश की मा-बहनो की  
मर-मर कर रक्षा करना ;  
शुभ-कर्मों के लिए कहीं भी  
मरने से तुम मत डरना ।

( २२ )

प्रजावर्ग को सदा पुत्रवत्  
मेरे पुत्र, मानना तुम ;  
मेरे इन अतिम शब्दों को  
मिथ्या नहीं जानना तुम ।

( २३ )

भाई ने जो पाप किया था  
उसको आज मिटा पाया ;  
इतना कह, चुल्लू भर फिर निज  
रक्त सभी पर छिड़काया ।

( २४ )

मेरे भाई क्या कायर थे  
यह मत पुत्र, जानना तुम ;  
मेरे जैसा वीर-धीर ही  
उनको पुत्र, मानना तुम ।

( २५ )

मैं जाता हूँ आज शान्ति से  
तुम सब अब सानेद रहो ;  
“जय-जय मातृभूमि की जय हो  
संग हमारे सभी कहो ।”

( २६ )

“जय जय, मातृभूमि की जय हो”  
कह सब गगन कँपाते है;  
इतने में गोविन्दगुप्त के  
नेत्र बंद हो जाते है ॥





## एंडर्सन की कहानियाँ

(अनु० श्री गंगा प्रसाद 'कौशल' )

प्रकाशक, सरला पुस्तक माला, कदमकुआँ, पटना,

मूल्य ॥२॥

कुछ सम्मतियाँ

अधिकार, लखनऊ

अंग्रेजी साहित्य में श्री हैस क्रिश्चियन ऐंडर्सन का नाम बड़े आदर से लिया जाता है और उनकी रचनाएँ चाव से पढ़ी जाती हैं। प्रस्तुत पुस्तक में उसी लोकप्रिय कहानीकार की पाँच चुनी हुई कहानियों का अनुवाद है। अंग्रेजी में एक उक्ति है—Translators are traitors अर्थात् अनुवादक हमें धोका देते हैं, मतलब—मूल का आनन्द हमें अनुवाद में नहीं मिलता। बात भी सच है, किन्तु यह दोष प्रायः उन्हीं लेखकों में होता है जो विषय को बिना हृदयगम किये शब्द-प्रति-शब्द अनुवाद करने का प्रयत्न करते हैं। जो अनुवादक मूल लेखक के मूल भावों की रक्षा कर सकता है, वह इसका अपवाद है। हमें प्रसन्ता है कि 'कौशल' जी अपने अनुवाद में सफल हुए हैं। हिन्दी के पाठक इस कहानी-संग्रह को चाव से पढ़ेंगे, ऐसी आशा है। मैं 'कौशल' जी को तदर्थ बधाई देता हूँ। अनुवाद में मौलिक रचना का आनन्द मिलता है।

आयोवत्, पटना :

अंग्रेजी कथा-साहित्य में ऐंडर्सन को बहुत ही उच्च स्थान प्राप्त है। उसी कहानियों की विशेषता है स्वाभाविक चरित्र-चित्रण, मनोवैज्ञानिक भावोद्भेक, सच्ची अनुभूति, और भाषा की सरलता तथा अबाधता।

प्रस्तुत पुस्तक इसी प्रसिद्ध कलाकार की पाँच उत्तम कहानियों का अनुवाद है। मूल लेखक के भावों की रक्षा करते हुए सरल और सुबोध भाषा में बड़े ही मौलिक ढंग से कहानियों का अनुवाद किया है।

ऊषा, गया :

••ऐं'डर्सन की कहानियाँ बहुत पहले से आदृत है उनके विषय में कुछ न कहना ही ठीक है। रही अनुवाद की बात , सो कौशल जी ने बड़ी ही सुन्दरता से किया है। बड़ी ही सरल और सादी भाषा, बहुतही अच्छा प्रवाह। अनुवाद में भी मौलिकता है। पाठको के लिए सब प्रकार से ये कहानियाँ रुचिकर होंगी।

किशोर, पटना .

प्रस्तुत पुस्तक में सुषमा के चिरपरिचित नवयुवक कवि श्री 'कौशल' जी द्वारा अनुवादित अमर कलाकार ऐं डर्सन की पाँच रोचक शिक्षाप्रद तथा चमस्कारपूर्ण कहानियाँ संकलित हैं। कहानियों की भाषा 'कौशल' जी के कवि-हृदय से निःसृत होने के कारण हृदय-स्पर्शी है, साथही प्रवाहपूर्ण भी। सरल शब्दों का सकलन बड़ी योगता और सतर्कता से किया गया है।

तिरहुत-समाचार, मुजफ्फरपुर :

• ऐसी कहानियाँ बच्चों के लिए काफ़ी अच्छी होती है। प्रस्तुत अनुवाद सुन्दर वन पड़ा है। 'सुषमा' के कवि श्री 'कौशल' जी को भाषा पर अधिकार है !

देशदूत इलाहाबाद :

कहानियाँ कलात्मक तो हैं ही। साथ ही मनोरंजक और उपदेश प्रद भी हैं। अनुवादक ने अपनी लेखन-शैली से हिन्दी अनुवाद में मूल की मौलिकता और रोचकता की पूर्ण रक्षा की है। भाषा भी सरल और सुबोध है। पुस्तक रोचक और पठनीय है।

## नवशक्ति, पटना ।

प्रस्तुत पुस्तक मे श्री 'कौशल' जी द्वारा अनूदित अमर कलाकार श्री हैस क्रिश्चियन ऐं'डर्सन की ५ भावपूर्ण कहानियाँ संग्रहीत है। हिन्दी मे ऐसे विशेष महान कलाकारों की रचनाओं का अनुवाद होना नितात आवश्यक है। अनुवादक का प्रयत्न सराहनीय है।

### बालसखा, इलाहाबाद :

भाषा सरल और सुबोध है। जल्दी पता नहीं चलता कि कहानियाँ अनुवादित है। कहानियाँ निस्सदेह बालकोपयोगी है।

### बिजली, पद्मा !

सभी कहानियाँ महोरजक और शिक्षाप्रद हैं। अनुवाद की भाषा सरल और सुबोध है।

### लोकमत, नागपुर :

श्री हैस ऐं डर्सन की कहानियाँ अंग्रेजी साहित्य मे बड़ा महत्व रखती हैं। सीधी सादी भाषा मे ऊँचे भावो से भरी सुन्दर कहानियाँ पाठक के हृदय पर स्थायी प्रभाव डाल जाती है। प्रस्तुत पुस्तक मे ऐं'डर्सन की पाँच कहानियाँ दी गयी है। कहानियाँ मनोरंजक होने के साथ साथ उपदेश-प्रद भी है। अनुवाद की भाषा भी सरल एवं प्रचलित है।

### विश्वबन्धु, कलकत्ता .

अंग्रेजी साहित्य के विख्यात कहानीकार श्री हैस क्रिश्चियन ऐं'डर्सन की कहानियाँ अपनी मौलिकता और भाव-चित्रण के लिए काफी मशहूर और लोकप्रिय है। प्रस्तुत संग्रह मे इन्ही की पाँच सुरचिपूर्ण कहानियों का अनुवाद है। अनुवादक है हिन्दी जगत के परिचित कहानीकार श्री गङ्गा प्रसाद 'कौशल'। अनूदित होने पर भी, प्रायः सभी कहानियाँ पढ़ते समय मौलिक-सी लगती हैं। हिन्दी के आधुनिक कहानीकारों को

जिन्हें अधिकांशतः 'मिलन' और 'विरह' के 'प्लॉट' के सिवा और कुछ सूझता ही नहीं, इस तरह की मौलिक कहानियाँ लिखने का प्रयास करना चाहिये, जिनके कथानक अपने देश की सभ्यता, संस्कृति और स्थिति के अनुरूप हो। हम 'कौशल' जी के प्रयास की प्रशंसा करते हैं।

**विश्वामित्र, कलकत्ता :**

•• अनुवादक ने शब्द-जाल में न फँसकर स्वतंत्र भावधारा में डुबकी लगाकर पाँच मोती निकाले हैं। भाषा सरल एवं सुबोध है। आशा है, हिन्दी सभ्यता में ये कहानियाँ समादृत होंगी।

**सरस्वती, इलाहाबाद :**

ऐं डर्सन अपनी बालोपयोगी कहानियों के लिए विश्व-प्रसिद्ध हैं। बालोपयोगी शिशु-साहित्य-रचना की कठिनाइयों को देखते हुए यह कहना पड़ता है कि ऐसे साहित्य के सृष्टा का मूल्य साहित्य में आँका नहीं जा सकता। हिन्दी साहित्य में ऐसे साहित्य का अभी अभाव है। प्रस्तुत पुस्तक सुप्रसिद्ध कहानीकार ऐं डर्सन की कुछ बालोपयोगी कहानियों का स्वतंत्र अनुवाद है। अनुवादक की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसकी भाषा सरल, एवं सहज बोधगम्य है। कहानियों का सकलन भी अच्छा है। यह पुस्तक बालकों के लिए उपयोगी है।

**सजनी, इलाहाबाद :—**

कहानियों का अनुवाद सीधी सादी, मुहावरेंदार भाषा में किया गया है। पुस्तक पठनीय है। अनुवादक अच्छी योग्यता रखता है।

**सात्विक जीवन, बनारस :—**

इस छोटी पुस्तक के अनुवाद द्वारा 'कौशल' जी ने हिन्दी-प्रेमियों को

ऐं'डर्सन की कला का परिचय कराया है। वे कहानियाँ मनोरंजक और उपदेशप्रद हैं। अनुवाद की भाषा साफ सुथरी और सरल है।

प० अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

'ऐं'डर्सन की कहानियाँ' की प्राप्ति सादर स्वीकार करता हूँ। उसमें विलक्षणता है और अपूर्वता, उसके चरित्र-चित्रण में भी वैचित्र्य है। अनुवाद की भाषा में भी अनुपमता है।

आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री :

'ऐं'डर्सन की कहानियाँ' बहुत अच्छी लगी। भाषान्तर करने में आपको पूरी पूरी सफलता मिली है। ऐसा प्रतीत हुआ मानो आकाश अपनी सम्पूर्ण सौन्दर्यराशि के साथ स्वच्छ सरोवर में प्रतिफलित हो गया है।

प० देवी दयाल चतुर्वेदी 'मस्त'

ऐं'डर्सन की कहानियों का अनुवाद आपने बहुत ही सुन्दर किया है। पढ़ने पर मूल कहानियों जैसा ही आनन्द आता है। इसके लिए मेरी बधाई स्वीकार कीजिये।

प० मोहनलाल महतो 'वियोगी'

अनुवाद सुन्दर उतरा है। मूल कहानियों के भाव-सौन्दर्य को, भाषान्तर करने में, आपने अच्छी तरह ध्यान में रखा है। मैं आपसे आग्रह करूँगा कि आप उन हिन्दी पाठकों के लिए जो अंग्रेजी को पढ़कर समझ नहीं सकते, कुछ कीजिये। इस तरह हिन्दी की सेवा होगी और आपके समय का सुन्दर उपयोग।

## हमारे नवीन प्रकाशन

(१) कान्ता—(स्त्री-के ३३ अंगों का सरस वर्णन)

लेखक, श्रीयुत गङ्गाप्रसाद गौड़ 'नाहर'

मूल्य १।)

(२) एंडर्सन की कहानियाँ (अमर कलाकार श्री हैस

क्रिश्चियन एंडर्सन की कहानियों का अनुवाद)

अनुवादक, श्रीयुत गङ्गाप्रसाद 'कौशल'

मूल्य ॥=)

(३) गोविन्दगुप्त (वीर रस का ऐतिहासिक खण्ड काव्य)

लेखक, श्रीयुत गङ्गाप्रसाद 'कौशल'

मूल्य १।)

कृपया सब प्रकार की पुस्तकों के लिए हमें लिखें।

— मैनेजर, सरला पुस्तकालय,

कदमकुआँ, पटना।



**OPINION**  
OF  
**Lt. Col. Dr. S. Sinha,**  
BAR-AT-LAW,  
Vice-Chancellor of the Patna University  
AND  
Editor of the Hindustan Review  
ON  
**ANDERSON KI KAHANIYAN**  
BY  
THE AUTHOR  
OF  
**GOVINDAGUPTA**

This book consists of the translation of five well-chosen stories of Anderson, who was one of the famous short story writers of the nineteenth century. The selection of stories for translation made by the compiler is admirable, as all of them are highly artistic and interesting. The language is simple and faultless. We hope that the author will continue to provide the Hindi Reading Public with such artistic stories of world renowned story writers.











